International Journal of Applied Research 2017; 3(3): 417-421

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(3): 417-421
www.allresearchjournal.com
Received: 11-01-2017
Accepted: 12-02-2017

डॉ. सुमन सामोता
प्राध्यापिका, हिंदी विभाग, राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय, मारौत (झज्जर) - हरियाणा, भारत

Correspondence
डॉ. सुमन सामोता
प्राध्यापिका, हिंदी विभाग, राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय, मारौत (झज्जर) - हरियाणा, भारत

नरेश मेहता के उपन्यासों में नारी पात्र

डॉ. सुमन सामोता

सारांश
इस शोध पत्र का उद्देश्य श्री नरेश मेहता के उपन्यासों में नारी चरित्र के प्रत्येक पहलू को दिखाने का रहा है। इसमें नारी के आंतरिक रूप की अभिव्यक्ति भी इतने स्वाभाविक ढंग से की गई है कि वे शीघ्र ही हमें अपने निकट महसूस होने लगती हैं। इसमें हमारा प्रयास यही रहा है कि प्रत्येक पात्र धरातल से जुड़ा हुआ हो। उनके अंतर्द्वंद को बड़े ही सुन्दर ढंग से चित्रित करने का प्रयास किया गया है। प्रत्येक नारी पात्र शिक्षित है और प्रत्येक अपने आप को अभिव्यक्ति देने में सफल रही है। यहां पर नारी के उच्छृंखल और धैर्यशील दोनों रूपों का वर्णन करने का उद्देश्य रहा है ताकि प्रत्येक व्यक्ति पढ़ते वक्त अपने आप को उनके नजदीक महसूस कर सके और उनके व्यक्तित्व के प्रत्येक पहलू को नजदीक से देख सके, समझ सके।

मूल शब्द: स्वच्छंद, पतिपरायण, समर्पिता, देहरी, पथभ्रष्टा

परिचय
जिस प्रकार श्री नरेश मेहता का साहित्य अनोखा है, उसी प्रकार उनका व्यकितत्व भी अद्वितीय है। वे ध्रुवांतों में जीने वाले व्यक्ति रहे हैं। "श्री नरेश मेहता का नाम सुनते ही लगता है कि जैसे शाही बिगुल बज उठा हो। व्यक्तित्व में सौम्यता जैसे बांसुरी की मिठास। दर्शन में भव्यता। लेखनी में मन्दाकिनी की पावनता, हिमशिखरों की शुभ्रता और सागर जैसी गुरु गम्भीरता। इन सब को मिलाकर बनता है एक नाम श्री नरेश मेहता।"[1] उपन्यास इनकी प्रिय विधाओं में से एक है। इन्होंने अपने उपन्यासों में नारी पात्र को ही केंद्र में रखा है। उनकी सफलता इसी बात में है कि वे दर्शकों और पाठकों के समक्ष तत्कालीन जीवन का सजीव चित्र प्रस्तुत कर सकें।
नारी के स्वरूप को निर्धारित करने से पहले यहां नारी के व्यक्तित्व का मूल्यांकन करना अत्यंत आवश्यक है। नारी विधाता की सृष्टि का बहुमूल्य रत्न है। प्राणी जगत में नारी शब्द नर के समानांतर है।

मैथिलीशरण गुप्त ने नारी को इस प्रकार स्वरूपित किया है -" नारी पुरुष की शक्ति, ज्योति, और सिद्धि का प्रतीक है।"[2] वहीं जयशंकर प्रसाद ने अपने महाकाव्य कामायनी के लज्जा सर्ग में नारी को इस प्रकार स्वरूपित किया है –

"नारी तुम केवल शृद्धा हो, विश्वास रजत नग -पग-तल में । पियूष स्रोत सी बहा करो, जीवन के सुंदर समतल में।"[3] नरेश मेहता ने अपने उपन्यासों में शिक्षित नारी के स्वरूप को चित्रित करने का प्रयास किया है। नरेश मेहता के उपन्यासों में नारी पात्र अनेक गुणों को ग्रहण किये हुए है। उनके उपन्यास 'दो एकांत' की नारी पात्र वानीरा है। वह एक आधुनिक और शिक्षित नारी है। वह जीवन में एकरसता को स्वीकार नहीं करती है। स्वच्छंद होकर जीवन जीना चाहती है। वह अपने पति से ऐसे व्यवहार की कामना करती है, जो दो पुरुष आपस में करते है। इसी वजह से वह मिस्टर क्लाइड, मेजर आनंद आदि पुरुषों के सम्पर्क में जाती है, और अपना स्वत्व लुटा बैठती है। वह स्वतन्त्रता की चाह में सब कुछ खो देती है। उसके हाथ से सब कुछ बालू रेत की तरह छूट गया। जब तक उसको पता चला तब तक उसकी मुट्ठी खाली हो चुकी थी। आखिर पश्चताप ही उसके हाथ लगता है। दूसरी तरफ उनके उपन्यास 'धूमकेतु एक: श्रुति' की इंदु को लीजिये, एक दम शांत स्व्भाव वाली नारी जो अपनी काकी माँ के बहुत अत्याचार सहन करती है लेकिन कुछ नहीं कहती है। इसी उपन्यास की एक और नारी पात्र जो इच्छाशंकर की माँ है। वह बहुत ही शांत और पतिपरायण स्त्री है, जो न कभी बड़ा बोलती है और न बड़ी बात की कामना ही करती है, क्योंकि बचपन में ही सौतेली माँ ने उसके मन में जो डर पैदा किया था वो हमेशा के लिए उसके मन में बैठ जाता है। जब उसके पति ने उसे उसका नाम लेकर बुलाया तो वह प्रफुल्लित हो उठी और अपने पति से विनम्रता से बोली – "आज तुमने मुझे पुकारा तो सच मनो, मुझे तीनों लोकों की सम्पदा मिल गयी" ।[4]

दूसरी ओर उनके उपन्यास 'यह पथबंधु था' की नारी पात्र सरस्वती नारी गुणों से संपन्न है वह प्रत्येक समस्या का सामना करते हुए अपने उत्तरदायित्व को पूर्ण रूप से निभाती है उसमे पतिव्रता, सहनशीलता, विवेकी, समर्पिता आदि सभी नारी सुलभ गुण मौजूद हैं वह अपने पति पर ही पूर्ण रूप से समर्पित है, वह उसके बिना अपना कोई वज़ूद नहीं समझती है जब उसके पति कहते हैं कि मुझ पर इतना निर्भर मत रहो सरो (सरस्वती), सबका अपना व्यक्तित्व स्वत्व होता है तुम्हारा भी होना चाहिये तब वह कहती है - "मेरा तो स्वत्व व्यक्तित्व, लोक, परलोक सब उसी दिन आप में लीन हो गया।"[5]

सरस्वती को रामायण पढ़ना बहुत अच्छा लगता है वह रामायण को शृद्धा समझती है श्रीधर सरो को कहते हैं कि नारी पृथ्वी होती है वह प्रजनन कि पीड़ा को अंदर से लेकर बाहर तक आद्यंत सहती है सरो तुम पृथ्वी हो । श्रीधर, सरो को लेकर भावुक हो उठते हैं और उससे कहते हैं –सरो, सीता को सबसे ज्यादा पीड़ा रावण ने दी या राम ने, तो सरो कहती है " देखिये आप जानते हैं कि मैं रामायण के प्रति तर्क नहीं करती, वह मेरी शृद्धा है यदि आप अग्नि परीक्षा कि बात कर रहे हैं तो यह उनकी आपसी बात थी पति का पत्नी पर पूरा अधिकार होता ही है और फिर यह परीक्षा तो प्रत्येक पत्नी को अपने अपने तरीके से देनी ही होती है पत्नी अपने पति और बच्चों के लिए क्या कुछ नहीं कर सकती।"[6] सरो प्रत्येक बात को सहन करने कि शक्ति रखती है या यों कहिये कि परिस्थितियों ने उसे मजबूत बना दिया है। जब उसके पति उसको सोता हुआ छोड़कर चले जाते हैं तो उनकी जेठानी उस पर फब्तियां कसती है कि स्वयं सरो ने अपने पति को घर से जाने के लिए विवश किया है वह प्रत्येक प्रताड़ना को सहन करती है लेकिन पलट कर जवाब नहीं देती है यहाँ पर हमें उसकी दशा यशोधरा जैसी लगती है जैसे नल यशोधरा को सोता हुआ छोड़कर चले जाते हैं लेकिन फर्क सिर्फ इतना है कि यशोधरा बिलखती है लेकिन सरो सब कुछ अंदर ही अंदर सहन कर लेती है लेकिन २५ वर्षों के बाद जब श्रीधर वापस लौटकर आते हैं तो उनके सामने अपने आंसुओं को रोक नहीं पाती है और अपने पति को कहती है कि "मैं तो उस

दिशा तक को २५ वर्षों तक जोहती रही, जिस ओर आप गए थे। बिना आपके यदि मुझे मुक्ति मिलनी होती तो कभी की चली गयी होती नाथ। अब नहीं सम्भलता आपका यह संसार। मुझे मुक्त करो। --------मैंने बापू को वचन दिया था कि बिना आपके आये इस घर कि देहरी नहीं लांघूँगी। अब मुझे अपने कन्धों से भगवन को सौंप आइये।"[7] इससे सरो का अपने पति के प्रति समर्पित होने का प्रमाण मिलता है।

दूसरी तरफ उन्होंने मालती नारी चरित्र के माध्यम से एक ऐसी नारी का चित्रण किया है जो एक वैश्या है लेकिन वेश्या बनने के पीछे उसकी परिवेशगत गन्दगी ही रही है। वह पेशे से वेश्या जरूर है लेकिन उसने अपनी आत्मा को वेश्या नहीं बनने दिया है। उसकी मजबूरियों ने ही उसे वेश्या बनने के लिए मजबूर किया है लेकिन वेश्या होते हुए भी उसमें इंसानियत, नारीत्व, मातृत्व, धर्म, लज्जा, समर्पिता, भावुकता इत्यादि सभी गुण मौजूद हैं। वह स्वयं भी इस कर्म को पाप मानती है। जब, वह परेशान होकर मरने के लिए जाती है तो बिशन उसे बचा लेता है। तब वह कहती है कि "हाँ मैं पथभ्रष्टा हूँ। चाहा था कि एक बार प्राण दे कर पुनः पथ प्राप्त कर लूँ, लेकिन आप फिर मेरी मुक्ति में आड़े आ गए। आप जानते है मैं वेश्या हूँ, बिशन बाबू।"[8] मेहता जी ने मालिनी के माध्यम से ऐसे चरित्र को हमारे सामने लाने का प्रयास किया है जो कारणवश वेश्या बनती है। वेश्या होने के बावजूद भी वह सभी नारी सुलभ गुणों युक्त है। रतना का एक अलग ही रूप हमारे सामने उभर कर आता है और वो है – एक क्रांतिकारी रूप। वह एक अध्यापक है, कोई छल नहीं है, कुंठा नहीं है। यदि कुछ है तो मात्र संकल्प है - प्राणों का होम कर देने का। शक्ति है, मोह है, दिन की सी निर्मलता है। ऐसा लगता है कि उसकी शक्ति के सामने सभी प्रणम्य हो उठेंगे। वह एक देशभक्त नारी है। जब देश के लिए समर्पित होने की बात आती है तो वह श्रीधर बाबू से कहती है – "सब क्या है? और जो सब कुछ देने कि बात कहता है, वह झूठ बोलता है। आप अपने को दे दें यही बहुत है। रही मैं !! अपने को जो देने आयी हूँ, दे सकूँगी कि नहीं इसका निर्णय केवल आगामी कल करेगा।"[9] इस प्रकार रतना एक क्रांतिकारी होते हुए भी भावुक, त्यागमयी, बहादुर और एक निस्वार्थ प्यार करने वाली औरत है।

सुनन्दा जो कि 'नदी यशस्वी है' की नारी पात्र है। वह उदयन की दोस्त के रूप में हमारे सामने आयी है, और जो देखने में संतुष्ट कदम्ब सी लगती है। उसमें मोह के मोती का ऐसा पानी था, जिसका जलत्व अनुभव हो रहा था। उसकी आँखें विशालाक्ष तो कदापि नहीं थी, किन्तु बड़ी आकाशमयी लग रही थी वह सहृदय है। किसी का अपमान सहन नहीं कर सकती। जब वेणु उदयन के बारे में कहती है किउदयन को कैरम भी नहीं आता और न ही वॉलीबॉल। इस पर सुनंदा उदयन का पक्ष लेते हुए कहती है। " लगा कि सच ये सब नहीं आते तो क्या हुआ ? जब औरों को आते हैं तो किसी दूसरे को भी आ सकते हैं। इसमें भला कहने कि क्या जरूरत है।"[10] वह अत्यंत ही सरल स्वभाव वाली है जो हमेशा दूसरों कि इच्छाओं का भी ख्याल रखती है। दूसरी तरफ कावेरी को ही लीजिये। वह एक 20 वर्ष की बाल विधवा है। वह उच्च कुल की तो नहीं है, पर राजपूतों की सारी गमक उसमें निश्चय ही थी। वह एक प्रकार से अनाथ ही है। उसका सारा दिन बिना बोले ही निकल जाया करता था। उसके मुख एवं व्यक्तित्व में मिला कर आमंत्रण एवं निषेध के विरोधी रंग कभी समरस हुए लगते तथा कभी नहीं। वह परित्यक्ता औरत है और एक परित्यक्ता के दुःख: को समझती है। वह अत्यंत कुंठित व्यक्तित्व वाली नारी है लेकिन फिर भी वह खुश रहने की कोशिश करती है। 'प्रथम फाल्गुन' उपन्यास में गोपा एक दर्पयुक्त नारी है। जब कोई उसको बाहर से देखता है तो वह अत्यंत ही सरल स्वभाव वाली नारी लगती है लेकिन जैसे ही हम उसके व्यक्तित्व की तहो तक जाते हैं तो पता चलता है कि वह एक घमंडी औरत है, जिसमें उदारता और सहिष्णुता का लेश मात्र भी नहीं है। जब वह महिम से मिलती है तो महिम बाबु कह कर सम्बोधित करती है। इस पर वे कहते हैं कि तुम मुझे सिर्फ महिम ही बुला सकती हो। तब उसने जिस अदब और सौम्यता का परिचय देते हुए कहती है - "यह नहीं होगा इसलिए कि

नारी कभी पुरुष नहीं हो सकती। नारी को यह शोभा नहीं देता। संतुलन बिगड़ जाता है।"[11] लेकिन कभी कभार वह इतनी चंचल हो जाती हैं कि महिम को विश्वास नहीं होता कि यह वह गोपा है जो इतना गम्भीर रहती है। महिम और गोपा दोनों किसी बात पर बहस कर रहे हैं और दोनों ही हंसते हैं। महिम गोपा से पूछता है कि तुम क्यों हँसी गोपा? तो गोपा कहती है -" इसलिए कि किसी चीज का अधूरा ज्ञान होने पर उसका प्रयोग करने पर यही दुर्दशा होती है।"[12] इस प्रकार के व्यवहार को देख कर महिम अत्यंत दुखी: हो उठता है।

गोपा जितना हंसमुख दिखती है, उतनी ही उसके मन में कहीं न कहीं पीड़ा ही भरी हुई है। उसके पास किसी भी चीज कि कमी नहीं है लेकिन फिर भी वह खुश नहीं है। इस बारे में जब महिम उसको कहते हैं, तो वह प्रत्युत्तर में कहती है -" आप समझते क्यों नहीं कि सबकुछ चमकने वाला सोना नहीं होता। क्या हम लोग और कुछ बातें नहीं कर सकते, महिम बाबू ।"[13] वह इतनी शांति और सहनशीलता दिखाती है, उतना वास्तव में कुछ भी नहीं है। जो बातें उसने महिम बाबु से कही थी उसमें वास्तविकता बहुत कम थी। जब उसकी माँ महिम को कहती है कि जो गोपा ने तुमसे कहा वह सब झूठ है लेकिन किसको विश्वास दिलाएं। तब उसका स्वाभिमान जागृत हो उठता है और वह कहती है -"महिम बाबु आप जा सकते हैं। आज तक के लिए आप के सदव्यवहार के लिए हम आपके आभारी हैं, धन्यवाद!..... मैं जानती हूँ, किसके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए। मम्मी! मैंने अधिकार चाहा था भिक्षा नहीं।

लोगों को भीख देने की इतनी बुरी आदत होती है कि उसके कारण आपसी सम्बन्ध तक दुर्गन्ध देने लगते हैं।"[14] इस प्रकार उसने अपने और महिम के रिश्ते को खत्म करने में एक मिनट भी नहीं लगायी। अगर वह थोड़ा सा आप को संयमित करती तो अपने और महिम के रिश्ते को बचा सकती थी।

'डूबते मस्तूल' उपन्यास की जो नायिका है वो रंजना है। रंजना अत्यंत सुन्दर है और कहीं न कहीं उसका सौंदर्य ही उसे ग्रसित करता लेता है। वह अपना एक अस्तित्व चाहती है। अपनी जिंदगी उसके लिये एक चुनौती रही है। इसमें विकल्प हो सकते थे लेकिन उसने कहीं परिस्थितियों को ओढा है और कहीं परिस्थितियों को अस्वीकारा है, कहीं परिस्थितियों ने उसे अपनी लपेट में ले लिया और कहीं परिस्थितियों कि झोली में स्वयं को ढीला न छोड़कर वह एक नया व्यक्तित्व लेकर उन्मुख होती है। वह इन परिस्थितियों से अत्यंत दुखी: हो उठती है। वह स्वामीनाथन से कहती है -" अकलंक कोई ऐसी बात नहीं कहने वाली हूँ कि तुम्हें सोच में डाल दूँ। तुम घबराओ नहीं, वह वक्त बीत गया - आंधी बीत गयी । अब व्यक्तित्व की खिड़कियां खोल दो। साफ़, तेज हवा आने की बेला है।"[15] वह हमेशा सुख और ठहराव की तलाश में भटकती है। अंत में रंजना का व्यक्तित्व एक प्रबल रूप लेकर सामने आता है। जिसके जीवनगत अनुभवों ने उपन्यास के नायिका की शाश्वत मान्यताओं को नष्ट कर जीवन सम्बन्धी नए प्रतिमान प्रस्तुत किये हैं।

दूसरी तरफ उत्तरकथा भाग - I, II की दुर्गा को श्री मेहता जी ने एक आदर्शवादी पात्र के रूप में चित्रित किया है। वह प्रत्येक व्यक्ति के अत्याचार को सहन करती है लेकिन पलट कर कुछ नहीं कहती। जब उसकी सास अपने भतीजे को दुर्गा के पास उसकी बेइज्जती करने के लिए भेजती है तो वह इस व्यवहार से आहत हो उठती है। वह सोचती है कि जो मेरा शरीर है, यह खत्म हो जायेगा। वह कहती है - यह स्त्री-देह वह कौंवों -चीलों के सामने मांस के लोथड़े सी फेंक देना चाहने लगी। इसी का तो सारा बन्धन है न? यही तुम प्राप्त करना चाहते हो न? मेरे लिए तो यह एकमात्र मांस पिंड है।..... और वह अंदर से चीखी - ओ माँ!" [16] लेकिन कई जगह उसकी सहनशीलता के साथ उसके साहसी होने का प्रमाण भी हमें मिलता है। जब बिशन उसके पास आकर बदतमीजी करने लगता है तब वह सिर्फ उसका विरोध ही नहीं करती बल्कि उसको मारती भी है। जब उसने देखा कि बिशन उसकी ओर झपट रहा है, तो दुर्गा ने अपना पूरा साहस दिखाते हुए खड़ाऊ उस पर फेंकी और उसका सिर फोड़ दिया। इससे उसके पतिव्रता होने का और अपने

पति के प्रति वफादार होने का प्रमाण भी मिलता है। उसमें हमें एक ममतामयी माँ का रूप भी देखने को मिलता है। जब उसकी बेटी कि शादी हो जाती है तो वह उस जिम्मेदारी को बखूबी निभाती है। कुल मिलाकर दुर्गा हमारे सामने अनेक चारित्रिक विशेताएं लेकर आयी है। वह सहनशील, पतिपरायण, सुशील, भावुक, अनुशासित तथा प्रत्येक परिस्थिति का सामना करने में सक्षम है। वह पाठकों के मन पर अपनी अलग पहचान छोड़ देती है।

उपसंहार

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि श्री नरेश मेहता के उपन्यासों में नारी पात्रों का जो जीवन्त और निखरा हुआ रूप हमारे सामने आया है वो अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। जहाँ एक ओर शांत दुर्गा, सरो इत्यादि चरित्रों ने अपनी अमिट छाप छोड़ी है वहीँ दूसरी ओर वाणीरा, रंजना आदि पात्रों ने आधुनिकता के परिपेक्ष्य में दिखाकर यह साबित कर दिया है कि उनके उपन्यासों में यथार्थ और आदर्श का मिश्रण देखा जा सकता है। इनके ज्यादातर नारी पात्र खासकर दुर्गा, सरो, गुणवंती किसी भी परिस्थिति में विचलित नहीं होती। हमेशा एक जैसी बनी रहती है। एक अन्य विशेषता यह रही है कि इन्होंने अपने उपन्यासों का माध्यम शिक्षित नारी को बनाया है। अत: मेहता जी अपने नारी पात्रों को चित्रित करने में पूर्णत: सफल हुए हैं। प्रत्येक नारी पात्र अपनी अलग पहचान लिए हुए है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. त्रिवेदी, प्रमोद (1997). श्री नरेश मेहता: दृश्य और दृष्टि, हिंदी बुक सेंटर, नई दिल्ली पृ. 1.
2. गुप्त, मैथिलीशरण (2005). साकेत, अष्टम सर्ग, झाँसी, साहित्य सदन, पृ. 216.
3. प्रसाद, जयशंकर (1936). कामायनी; लज्जा सर्ग, पृ. 48.
4. मेहता, नरेश (1962). धूमकेतु: एक श्रुति: पृ. 258
5. मेहता, नरेश (1962). 'यह पथबंधु था,' इलाहबाद, लोक भारती प्रकाशन, पृ. 256
6. वही पृ. 248
7. मेहता, नरेश (1962). 'यह पथबंधु था,' इलाहबाद, लोक भारती प्रकाशन, पृ. 457
8. वही पृ. 478.
9. मेहता, नरेश (1962). 'यह पथबंधु था,' इलाहबाद, लोक भारती प्रकाशन, पृ. 479
10. मेहता, नरेश (1967). 'नदी यशस्वी है' , इलाहबाद: लोक भारती प्रकाशन.
11. मेहता, नरेश (1968). ' प्रथम फाल्गुन,' इलाहबाद, लोक भारती प्रकाशन, पृ. 138
12. वही पृ. 140.
13. वही पृ. 135.
14. मेहता, नरेश (1968). ' प्रथम फाल्गुन,' इलाहबाद, लोक भारती प्रकाशन, पृ. 137.
15. मेहता, नरेश (1954). 'डूबते मस्तूल,' इलाहबाद, लोक भारती प्रकाशन, पृ. 145.
16. मेहता, नरेश (1979). 'उत्तरकथा भाग-1,' इलाहबाद, लोक भारती प्रकाशन, पृ. 96.